Indian Streams Research Journal
ISSN 2230-7850
Volume-4 | Issue-5 | June-2014 Available online at www. isrj.net

विश्व पटल पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव

नीरज शर्मा

कन्या महाविद्यालय, जालन्धर(पंजाब)

सारांश **:-** भारतीय संस्कृति की गहन, गम्भीर एवं अनन्त रश्मियाँ अनन्त काल से समस्त राष्ट्रों को ज्ञान का अनन्त आलोक प्रदान कर प्रकाशित करती आ रही हैं और विश्व पटल पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव सर्वदा नभ-छत्र की भान्ति वर्तमान है। यह कथन अपने अन्दर उतनी ही सच्चाई लिए हुए है, जितनी इस कथन में है कि भगवान भास्कर संसार भर के लिए आलोक-पुंज हैं।

प्रस्तावना :

वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक युगीन संस्कृत साहित्य का आलम्बन लेकर सर्वदा हम यह गर्व के साथ कहते आये हैं कि भारतीय संस्कृति समस्त विश्व के लिए एक वरदान है और इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि संस्कृत की इस अमूल्य धरोहर से अंशदान लेकर विश्व के अनेक राष्ट्रों ने अपने ज्ञान-विज्ञान और वैभव को उत्कर्ष दिया है और इस कार्य की सम्पूर्णता में देश-विदेश के साहित्य-मनीषियों, दार्शनिकों, इतिहासवेत्ताओं ने न केवल स्वयं संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त किया वरन् संस्कृत-साहित्य का गहन अध्ययन कर उसे अपनी अपनी भाषाओं में अनुवादित कर अपने भाषा-साहित्य जगत को अनुपम उपहार दिया है, जिसकी प्रशंसा विश्व के अनन्य प्रसिद्ध विद्वानों ने की है और भारतीय संस्कृति एवं संस्कृत साहित्य को सिर-माथे पर रक्ख कर माना है कि उन पर भारत का बहुत ऋण है, जिससे उऋण होना उनके लिए कदापि संभव नहीं।

आज जब समस्त संसार एक ग्राम अथवा मण्डल बन चुका है तो इस युग में प्रत्येक व्यक्ति के लिए संसार की अधिकतम जानकारियाँ होना उसकी अनिवार्यता हो गई है। विविध प्रयोजन से उसे देश-विदेश की सामाजिक, रजनैतिक, सांस्कृतिक तथा भौगोलिक परिस्थितियों से अवगत होना अत्यन्त आवश्यक एवं अपरिहार्य हो गया है। देश-विदेश की विविध परिस्थितियों की जानकारी होने के लिए हमें उस क्षेत्र की भाषा और साहित्य से जुड़ना होता है। प्रत्येक व्यक्ति के लिए अब यह तो कदापि सम्भव नहीं कि वह सम्पूर्ण भाषाओं का ज्ञाता हो जाए। इस समस्या का समाधान किए बिना हम स्वयं को दूसरे देश, राष्ट्र अथवा समाज की भाषा-साहित्य और संस्कृति से लाभान्वित नहीं हो सकते, जिसका परिणामस्वरूप हमारा ज्ञान

अधूरा और एकाँगी बनकर रह जाता है। आज मात्र विशिष्ट ज्ञान और रंजक साहित्य ही नहीं वरन् अपने से भिन्न भाषा-भाषी समुदाय के व्याहारिक तथा उपयोगी साहित्य का अध्ययन भी आवश्यक ही नहीं अपितु अपरिहार्य भी हो गया है और इस जरूरत को पूरा करने का कार्य अनुवाद ने किया है और इसीलिए अनुवाद अपने इस प्रयोजन में बहुमुखी और बहुआयामी बन चुका है। [1]

मैथ्यू आर्नाल्ड का मत है कि अपनी भाषा में रचित साहित्य के अतिरिक्त किसी दूसरी भाषा के साहित्य(जो ज्यादा बेहतर हो) से भली-भान्ति परिचित होना प्रत्येक आलोचक के लिए आवश्यक है [2] और इसके लिए अनुवादों का आश्रय आवश्यक है।[3]

भारतीय साहित्य की संकल्पना में अनुवाद की प्रमुख भूमिका विविध भाषाओं में आदान-प्रदान की दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण रही है और आगे भी रहेगी। एक अखण्ड और सम्पूर्ण भारत की सांस्कृतिक एकता के लिए भाषाओं में परस्पर सम्बन्ध दिखाना अनुवाद के बिना संभव ही नहीं है। भारतीय साहित्य की प्रमुख प्रवृति भक्ति और आधुनिक काल का नवजागरण साहित्य अनुवाद और तुलनात्मक अध्ययन से ही हमारे सन्मुख आ पाया है। इस प्रकार अनुवाद एक वांछनीय और सक्रिय भूमिका अदा करता है। रीतारानी पालीवाल के शब्दों में आज की दुनिया की एकता अथवा दुनिया की सांस्कृतिक एकता की बात की जाती है तो अनुवाद की आवश्यकता निर्विवाद सिद्ध हो जाती है। विभिन्न सभ्यताओं और संस्कृतियों को जानने और समझने के लिए अनुवाद को माध्यम बनाना हमारी नियति है।[4]

तुलनात्मक दृष्टि से भारतीय भाषाओं के साहित्य की गवेषणा से बहुत सा बहुमूल्य साहित्य भण्डार हमारे समक्ष आया है। दक्षिण भारत के विश्वविद्यालयों में हो रहे अनुसन्धान हिन्दी तथा अन्य भाषाओं के लिए भी अत्यन्त वृद्धिकारक रही है। बहुत से शोधार्थियों का ध्यान हिन्दी तथा अन्य भाषाओं के साहित्यकारों व उनके साहित्यरूपों की ओर गया है। इस प्रकार एक तरफ़ वे भाषाओं के परस्पर आदान-प्रदान का सेतु बने हैं तो दूसरी तरफ़ यह राष्ट्र के भावात्मक एक्य को पुष्ट करने में सहायक भी रहा है।[5] अत: तुलनात्मक अध्ययन सभी भाषाओं के साहित्य और समाज के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। किसी भी भाषा में विकास की शर्त यह भी होती है कि उसमें लचक कितनी है अर्थात् उस भाषा में दूसरे स्रोतों से आए प्रभाव को ग्रहण करने आत्मसात् करने का माद्दा किस मात्रा में है। क्योंकि वही भाषा जिवित रहती है जो इस गुण से युक्त होती है।

प्राचीन शिलालेखों के आधार पर यह प्रमाणित होता है कि कौडिन्य और अगस्त्य ऋषिगण स्वयं समुद्र-पार जा कर संसार को वैदिक सन्देश का उपहार देने गये थे। धीरे-धीरे सम्पूर्ण विश्व का ध्यान भारत की ओर आकर्षित हुआ और सभी ने अपनी-अपनी क्षमता के अनुसार इसका लाभ उठाया। मुगल-सम्राट शाहजहाँ के पुत्र दाराशिकोह ने उपनिषदों के कुछ भागों का फारसी भाषा में अनुवाद किया था, जिसके माध्यम से यूरोप के विद्वानों को भारतीय संस्कृति के भण्डार के बारे में ज्ञात हुआ। फ्लोरेन्स निवासी फिलियो सासेतो ने पाँच वर्ष तक गोआ में निवास किया और संस्कृत जा अध्ययन किया। वह औषधि विज्ञान में रुचि रखने वाला था, लेकिन उसने अपने अध्ययन में यह पाया कि संस्कृत और यूरोप की मूख्य भाषाएँ आपस में सम्बद्ध हैं।

दिदेरो ने भारतीय धर्म और दर्शन पर विश्वकोश(1751) लिखा,1770 में दिदेरो द होलबक एवं नाइगो की सहायता से एबे रायल ने 'फिलॉसॉफीकल एण्ड पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ द यूरोपियन्स टू द

इण्डियाज' प्रकाशित किया। [6] जर्मन पादरी हेनरिक रॉथ (1610-88) को प्रथम यूरोपियन माना जाता है, जिसने लेटिन भाषा में संस्कृत हिडेनडम' में पुर्तगाली अनुवाद के आधार पर संस्कृत कवि भर्तृहरि की लगभग दो सौ सूक्तियों को शामिल किया गया। इसके अतिरिक हिन्दु रीति-रिवाजों तथा धर्म की व्याख्या के साथ-साथ वेदों का उल्लेख भी इस पुस्तक में प्राप्त होता है। 1663 में इस पुस्तक का जर्मन में अनुवाद किया गया और हर्डर(1744-1813) ने अपनी पुस्तक 'स्टिमेन डेर फोल्कर इन लीडर्न'(गीतों में जनता की आवाज) में इसके विषय को प्रकाशित किया। पंचतन्त्र की कहानियों के बाद जर्मनी में ज्ञात होने वाली यही प्रथम भारतीय साहित्यिक कृति है। जर्मन पादरी जोहान अंसर्ट हैंक्सलीडेन ने संस्कृत व्याकरण को लेटिन में संकलित किया । इसी प्रकार से पादरी योहांस फिलिपस द्वारा भारतीय साहित्य के आदिकाल किया गया काम भी बहुत महत्त्वपूर्ण माना जाता है।[7] उनका यह मानना था कि संस्कृत और यूरोपीय भाषाओं में आनुवांशिक सम्बन्ध है। वे संस्कृत के अच्छे जानकार थे, उन्होंने व्याकरण के नियमों का, अमरकोश तथा अन्य भारतीय शब्दकोशों का भी उल्लेख किया है तथा काव्य-शैली के प्रमुख अंगों , अंलकारों के प्रयोग पर भी प्रकाश डाला है। 1785 में विल्किन्स द्वारा भगवद्गीता का अंग्रेजी में अनुवाद किया गया, जिसे सीधे संस्कृत से यूरोपीय भाषा में अनुवादित प्रथम संस्कृत ग्रंथ माना जाता है।[8] विलियम जोन्स ने 1792 में जयदेव के 'गीत गोविन्द' का अनुवाद किया और कालिदास के 'ऋतुसंहार' के मूल पाठ का प्रकाशन कराया। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य जो उन्होंने किया वह था 'मनुस्मृति' का अनुवाद, जो उनकी मृत्यु के बाद 'आर्डिनेन्स ऑफ मनु' नाम से 1794 में प्रकाशित हुआ। एक बात और भी महत्त्व की है कि जोन्स को ही वह अंग्रेग व्यक्ति माना जाता है, जिसने निश्चित रूप से संस्कृत के साथ ग्रीक, लैटिन, फारसी, जर्मनी और सेल्टिक भाषाओं का वंश परम्परागत सम्बन्ध निर्धारित किया और बताया कि इन सभी भाषाओं में संस्कृत आश्चर्यजनक रूप से अधिक समृद्ध है तथा ग्रीक के साथ साम्य इनके उद्गम के एक ही स्रोत होने की ओर संकेत है।[9] जोन्स के इन कार्यों का बहुत अधिक प्रभाव प्राच्यविद्या के अध्ययन पर पड़ा और सम्पूर्ण विश्व के विद्वान संस्कृत पाण्डुलिपियों की खोज में ऐसे उत्साह से प्रवृत्त हुए जैसे 'आस्ट्रेलिया के स्वर्णपत्रों के प्रति अन्वेषक निकल पड़े हों।[10] हेनरी टॉमस कोलब्रुक(1765-1837) को संस्कृत के अध्ययन को वैज्ञानिक रूप देने का श्रेय दिया जाता है, जिन्होंने अपने कठोर परिश्रम और निर्मल बुद्धि से कितने ही ग्रन्थों का पाठ-सम्पादन किया, अनुवाद किया और निबन्ध लिखे, जो प्राय संस्कृत साहित्य के सभी अंगों से सम्बद्ध हैं। 1813 में उनके द्वारा किया गया कालिदास के 'मेघदूत' काव्य का सुन्दर अनुवाद प्रस्तुत किया गया जिससे प्रभावित होकर इस काव्य का अनेक भाषाओं में अनुवाद किए गए। ह्यू पेरों यद्यपि संस्कृत नहीं जानते थे, तथापि उनके द्वारा किया गया उपनिषदों का अशुद्ध अनुवाद भी यूरोपीय साहित्य के लिए एक महत्त्वपूर्ण देन सिद्ध हुआ, जिसे जर्मन दार्शनिक शोलिंग और शॉपेन हॉवर ने भी 'मानव की उच्चतम बुद्धि का प्राकट्य' बताया।।[11]

लिओनार्ड द शेजी ने भी अन्य समसामयिक विचारकों की भान्ति यह अनुभव किया कि भारतीय ज्ञान-विज्ञान की उपलब्धियों से परिचित होना चाहिए, इसलिए फ्रांस में भारतीय संस्कृति का अध्ययन

करने हेतु एक प्रबल दल बन गया। यूजीन बरनॉफ ने रायल लाब्रेरी में लगभग एक शताब्दी से दबे पड़े मूल वैदिक साहित्य को खोज निकाला और संस्कृत पर काफी मात्रा में शोध की और भागवत पुराण का फ्रेंच भाषा में अनुवाद किया। उनके इन प्रयासों से यूरोप में भारतीय साहित्य और संस्कृति के अध्ययन की बहुत प्रगति हुई। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि फ्रांस में भारतीय संस्कृति का अत्यधिक प्रभाव पड़ा और लोग भारतीय साहित्य को आदरपूर्वक एवं रुचिपूर्वक पढ़ते थे। 1868 में 'इकोल देहॉत एत्युदे' की स्थापना के बाद भारतीय विद्या अध्ययन के लिए एक नया केन्द्र खोला गया। अन्य बहुत से फ्रेंच संस्कृत विद्वानों में मुख्य रूप से भारतीय काव्यशास्त्र और नाट्यशास्त्र पर कार्य करने वालों में से पॉली रेनॉल्ड, हावेन बेनाल, आगस्त बार्थ, एबेल बरगाइन और एमिली सेनार्त्त थे। बार्थ ने अपने जीवन के चालीस वर्ष भारतीय धर्मों का उनके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करने तथा भारतीय विद्या के विविध क्षेत्रों में प्रकाशित ग्रन्थों की समालोचना करने में व्यतीत किया। बरगाइन ने एक युगान्तकारी पुस्तक 'द वैदिक रिलीजन एकॉर्डिंग टू द हिम्न्स ऑफ द संहिता ऑफ द ऋग्वेद' लिखी। भारतीय क्षेत्रों पर से अपना अधिकार छोड़ देने पर भी भारतीय साहित्य के मोह को वे छोड़ नहीं पाए। फ्रांस और जर्मनी भारत से इस भान्ति प्रभावित थे कि इन क्षेत्रों को यूरोप का आर्यवृत कहा जाता है। संस्कृत के अतिरिक्त अन्य किसी भाषा में वेद का अनुवाद करने का श्रेय जर्मनी को ही जाता है। जर्मन-मनीषी प्रो. मैक्समूलर ने भारतीय संस्कृति तथा संस्कृत साहित्य से प्रभावित होकर ऋग्वेद सहित अनेक भारतीय ग्रन्थों पर गवेषणा करते हुए ग्रन्थ-रचना की, जिनका प्रकाशन 'सीक्रेट बुक ऑफ दि ईस्ट' पुस्तकमाला के रूप में हुआ है। प्रो. पालड्यून के द्वारा की गई उपनिषदों की समीक्षा सहित ग्रन्थ 'दि फिलासफी देर उपनिषद्स' पढ़ने से प्रतीत होता है कि वे इस महान दर्शन से कितने अधिक प्रभावित थे, यहाँ तक कि उन्होंने अपना नाम भी बदलकर 'देवसेन' रख लिया था। हाइनरिथ जिमर का 'भारतीय पुराण' को पढ़ने पर पुराणों के काल,उद्देश्य और आधार पर नवीन दृष्टिकोण उपलब्ध होता है।[12]

यद्यपि वैदिक वाड्.मय की महत्ता और उसके द्वारा प्रसारित समस्त भूमण्डल पर पड़े प्रभाव को आँक पाना और उसे शब्दबद्ध करना किसी भी प्रकार से संभव नहीं, तथापि उपर्युक्त संक्षिप्त सा विवेचन-अवलोकन, जिसमें यह संकेतित है कि विश्वभर के लगभग सभी विद्वानों के मन में भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रति अपार आकर्षण था और बहुत से विद्वानों नें इसकी गुणवत्ता एवं महत्ता को विभिन्न रूपों नें अंगीकार करते हुए अपनी भाषा, दर्शन एवं साहित्य को लाभान्वित किया है। इस प्रकार यह नि:संकोच कहा जा सकता है कि एशिया की सीमाओं को पार कर यूरोप सहित पूरे विश्व-पटल पर जितना प्रभाव भारतीय संस्कृति एवं साहित्य का पड़ा है, उतना किसी अन्य का नहीं; और यह मात्र कथन ही नहीं अपितु सार्वकालिक, सर्वांग, सर्वांश एवं सम्पूर्ण सत्य है।

1. अनुवाद: सिद्धान्त और समस्याएँ,रवीन्द्र श्रीवास्तव एवं कृष्णकुमार गोस्वामी,पृ.9
2. ऐसेज़ इन क्रिटीसिज़म,मैथ्यू आर्नाल्ड, पृ.39
3. अनुवाद की सामाजिक भूमिका,रीतारानी पालीवाल,पृ.72

4. अनुवाद की सामाजिक भूमिका,रीतारानी पालीवाल,पृ.90
5. सूरदास और नरसिंह महेता:तुलनात्मक अध्ययन,भ्रमरलाल जोशी,प्राक्कथन
6. अरुण कुमार जायसवाल, वैदिक संस्कृति के विविध आयाम, पृ.435
7. M.Winternitz,A History of Indian Litteratur, vol.viii,p.8
8. अरुण कुमार जायसवाल, वैदिक संस्कृति के विविध आयाम, पृ.437
9. अरुण कुमार जायसवाल, वैदिक संस्कृति के विविध आयाम, पृ.438-39
10. G.T.Garret (edit),The Legacy of India,p.31
11. अरुण कुमार जायसवाल, वैदिक संस्कृति के विविध आयाम, पृ.437
12. पं श्रीराम शर्मा आचार्य, समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान, भाग 1,पृ.65

नीरज शर्मा
कन्या महाविद्यालय, जालन्धर(पंजाब)